अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 8.789 Volume 14-Issue 02, (April-June 2026)

उषाकिरण खान के उपन्यासों में आंचलिक तत्व

चमचम कुमारी
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा
ई मेल – chamchamroy305@gmail.com

डॉ.समीर
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
पंजाब केंद्रीय विश्वविद्यालय, बठिंडा
saksham.sameer@gmail.com

सारांश

मैथिली एवं हिन्दी की प्रख्यात उपन्यासकार उषाकिरण खान ने आंचलिक उपन्यास परंपरा को समकालीन संदर्भों में नवीन संवेदना और यथार्थपरकता प्रदान की है। उनकी कृतियाँ फणीश्वरनाथ रेणु और नागार्जुन द्वारा स्थापित आंचलिक धारा की उत्तराधिकारी होते हुए भी उसे विस्तृत एवं आधुनिक आयाम प्रदान करती हैं। उषाकिरण खान ने अपने उपन्यासों में बिहार, विशेषतः मिथिलांचल के ग्रामीण जीवन को केंद्र में रखकर वहाँ की सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना, रीति-रिवाज, लोकाचार, वेश-भूषा, खान-पान, पर्व-त्योहार तथा लोक-मानस का अत्यंत सूक्ष्म एवं जीवंत चित्रण किया है। उनके उपन्यासों में आंचलिकता केवल भौगोलिक सीमाओं तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह लोक-संस्कृति, लोक-भाषा और जनजीवन की विविध संवेदनाओं के माध्यम से व्यापक मानवीय अनुभवों का रूप ग्रहण कर लेती है। वे क्षेत्रीय जीवन के संघर्ष, सामाजिक विषमताओं, स्त्री-जीवन की जटिलताओं तथा बदलते समय के प्रभावों को अत्यंत मार्मिकता और प्रामाणिकता के साथ अभिव्यक्त करती हैं। उषाकिरण खान की रचनात्मकता का विशेष पक्ष यह है कि वे परंपरा और आधुनिकता के मध्य संतुलन स्थापित करती हैं। एक ओर वे लोक-संस्कृति के संरक्षण और संवर्धन का कार्य करती हैं, वहीं दूसरी ओर आधुनिक चेतना, स्त्री-स्वतंत्रता, शिक्षा और आत्मनिर्भरता जैसे नवीन मूल्यों को भी अपने कथानकों में समाहित करती हैं। इस प्रकार, उनके उपन्यास आंचलिक तत्वों की दृष्टि से समृद्ध होने के साथ-साथ व्यापक सामाजिक सरोकारों से भी जुड़े हुए हैं। वे आंचलिक उपन्यास को केवल क्षेत्रीयता तक सीमित न रखकर उसे सार्वभौमिक मानवीय अनुभवों का दस्तावेज़ बना देती हैं, जिससे उनकी रचनाएँ समकालीन हिन्दी उपन्यास परंपरा में विशिष्ट स्थान प्राप्त करती हैं।

बीज शब्द – आंचलिकता, मिथिलांचल, लोक-संस्कृति, ग्रामीण जीवन, लोक-भाषा, स्त्री-चेतना, सामाजिक यथार्थ

मूल आलेख –

'अंचल' शब्द संस्कृत के 'अंच्' धातु में 'अलच्' प्रत्यय के संयोग से निष्पन्न हुआ है, जिसका शाब्दिक अर्थ है साड़ी का छोर या किनारा; किन्तु साहित्य के संदर्भ में इसका अर्थ भौगोलिक सीमा में बद्ध कोई स्थान विशेष से लिया जाता है। जिसकी अपनी संस्कृति, परंपरा, खान-पान, रहन-सहन, रीति-रिवाज एवं समस्याएँ होती हैं। इसी 'अंचल' शब्द का विशेषण रूप 'आंचलिक' शब्द है जिसका अर्थ है 'अंचल संबंधी'[1] या 'किसी देश या प्रांत-भाग से संबंधित वस्तु विशेष'[2]। इसी प्रकार किसी स्थान विशेष को आधार बनाकर उसकी विशिष्टताओं एवं समस्याओं का चित्रण करने वाले लेखकों को आंचलिक उपन्यासकार की श्रेणी में प्रतिष्ठित किया जाता है। आंचलिक उपन्यास की परिभाषा देते हुए डॉ. सुरेश सिन्हा कहते हैं कि – "आंचलिक उपन्यासों में किसी अंचल विशेष, स्थान विशेष या ग्राम विशेष को कथानक का आधार बनाकर उपन्यास का सृजन होता है। मानव-जीवन का फैलाव अत्यन्त

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 8.789 Volume 14-Issue 02, (April-June 2026)

विस्तृत एवं व्यापक है और आंचलिक उपन्यासकार बजाय उस व्यापक फैलाव में जाने के एक छोटे से अंचल को चुन लेता है। वहाँ के रीति-रिवाजों, धर्म, संस्कृति, सामाजिक एवं राजनीतिक प्रभाव एवं स्थिति तथा मानवीय प्रवृत्तियों को वह विस्तृत परिवेश में चित्रित करने का कलात्मक प्रयास करता है, जिससे वह कथा एक अंचल विशेष की होते हुए भी सर्वजनीनता प्राप्त कर लेती है।"[3] इसी क्रम में आंचलिक उपन्यासों को विस्तारित रूप से परिभाषित करते हुए डॉ. कान्ति वर्मा लिखते हैं कि "आंचलिक शब्द का तात्विक अर्थ यह नहीं है कि केवल ग्रामीण कथाएं ही इसके क्षेत्र में आयें बल्कि किसी छोटे शहर की विशेषता को उभारने वाला साहित्य भी आंचलिकता की सीमा में आा जाता है। हिन्दी में कितने ही उपन्यास इस प्रकार के लिखे गये हैं जिनमें छोटे शहरों की सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक स्थितियों का चित्रण हुआ है और उनमें आंचलिकता के अन्य सब तत्व भी पाये जाते हैं।"[4]

वैसे तो आंचलिक प्रवृतियों को आधार बनाकर रचना करने वाले हिन्दी लेखकों में सेनापति, शिवपूजन सहाय, प्रेमचंद, वृंदावनलाल वर्मा, शिवप्रसाद सिंह 'रुद्र' काशिकेय, देवेन्द्र सत्यर्थी आदि का नाम प्रमुख है। किन्तु 1954 ईस्वी में फणीश्वरनाथ रेणु द्वारा रचित 'मैला आँचल' आंचलिकता के सम्पूर्ण तत्वों को दिखाने में सफल होता है इसलिए रेणु को आंचलिक उपन्यासों का सूत्रपात करने वाला माना जाता है। सर्वप्रथम हमारे समक्ष यह सवाल उठता है कि आंचलिक उपन्यासों के प्रारम्भिक रूप क्या थे? और वह वर्तमान समय में लिखे जा रहे आंचलिक उपन्यासों से किन संदर्भों में भिन्न थे। प्रारम्भ में ग्राम्य जीवन पर लिखे गए उपन्यास 'छह बीघा जमीन', 'देहाती दुनिया', 'गोदान', 'बलचनामा' आदि का विषय जमींदार, महाजन एवं साहूकारों के शोषण से शोषित किसानों की गाथा है। किन्तु आंचलिक उपन्यासों के विषय में सन् 1967 के बाद काफी परिवर्तन हुए क्योंकि वैश्विक परिदृश्य के परिवर्तन के साथ-साथ ग्रामीण उपन्यासों के कलेवर में भी बदलाव हुए। परिवर्तनों एवं समकालीन संदर्भों को पहचान कर सन् 1967 के बाद के उपन्यासकारों ने तत्कालीन ग्रामीण परिवेश को अपनी रचनाओं में चित्रित किया।

रेणु की परंपरा को निरंतर प्रवाहमान बनाने वाले लेखकों की श्रेणी में श्रीलाल शुक्ल, रामदरश मिश्र, हिमांशु जोशी, विवेकी राय, कृष्णा सोबती, शिवप्रसाद सिंह, वीरेंद्र जैन, मैत्रेयी पुष्पा, भगवानदास मोरवाल, संजीव, रणेन्द्र, महुआ माझी आदि प्रमुख लेखक हैं। जिन्होंने अपनी रचनाओं में आंचलिकता की परंपरा या प्रवृत्ति को जीवित रखा है। रेणु की इसी परंपरा को जीवित रखने का अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य हिंदी और मैथिली की अद्वितीय महिला उपन्यासकार उषाकिरण खान ने किया है। उषाकिरण खान ने अपने उपन्यासों में बिहार के दरभंगा, मधुबनी, लहेरियासराय आदि अंचल को आधार बनाकर वहाँ के ग्रामवासियों के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक संघर्ष एवं जिजीविषा को दर्शाया है। प्रेमचंद, नागार्जुन और रेणु की परंपरा से जुड़कर उषाकिरण खान अपनी रचनाओं में ग्राम जीवन का चित्रण कर लोक संस्कृति का आख्यान गढ़ती हैं। ग्रामीण परिवेश का चित्रण कर लेखिका ने लोक परंपरा की रक्षा तो की ही है साथ ही साथ नई चेतना के आगमन से नए-नए परिवर्तनों को भी समावेश किया है।

जिन तत्वों को आधार बनाकर आंचलिक उपन्यास की रचना की जाती है, उनमें आंचलिक कथा, क्षेत्र विशेष से संबंधित पात्र, क्षेत्र विशेष के वातावरण का चित्रण, लोक संस्कृति, स्थानीय भाषा और आधुनिक चेतना शामिल हैं। आंचलिक उपन्यास का कथानक अंचल विशेष की घटनाओं एवं उसके इर्द-गिर्द से ही बुना होना चाहिए। अन्य उपन्यासों में कथानक के लिए कोई नियम विशेष नहीं होता है इसलिए यही वो कारण है जो आंचलिक उपन्यासों को अन्य उपन्यासों से उसे भिन्न करता है। आंचलिक कथानक के प्रयोग में डॉ. उषाकिरण खान को पूर्ण रूप से सफलता मिलती है क्योंकि उनके द्वारा लिखे गए सम्पूर्ण उपन्यासों की कथा विशेष रूप से बिहार का अंचल है। उनके उपन्यासों का कथानक किसी कारण वश अंचल से बाहर निकलता भी है तो वह वहाँ के आस-पास के शहर तक जाकर कुछ समय बाद अपनी गाँव की ओर पुनः वापस आ जाता है। इसलिए अपने उपन्यासों में कथानक

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 8.789 Volume 14-Issue 02, (April-June 2026)

का प्रयोग उषाकिरण खान ने बड़े सटीकता के साथ किया है। 'फागुन के बाद' उपन्यास की कथा ठाकुर गाँव के इर्द गिर्द घुमता है, 'सीमांत कथा' की कथा भी सिवान जिले में व्याप्त हिंसा और राजनीति को चित्रित करता है। उपन्यास का पात्र दिनेश के कथन के माध्यम से इसे स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। उदा.- "एक स्वप्नदर्शी आत्मोत्सर्गी नायक का यह अन्त। जाति-संघर्ष, वर्ग-संघर्ष की लपटों से घिरे इस प्रदेश में क्यों भटक रहे हैं नौजवान, क्यों बनते हैं आदमखोर, क्यों उठाते हैं हथियार। यदि सबों का लक्ष्य एक ही है- बराबरी, समानता, एकरूपता तो उसका तरीका एक ही क्यों नहीं हो सकता! संविधान-सम्मत व्यवस्था को लागू करने के लिए हमारे नौजवान असफल क्रांतियों की विवशता के लिए क्यों अभिशापित हैं?"[5] 'कथा रजोखर' उपन्यास में मिथिला की ऐतिहासिक और वर्तमान दशा को दर्शाया गया है। 'हसीना मंजिल' तिरहुत की लोक संस्कृति और संघर्ष की कहानी है। 'आशा : बारहखड़ी बिधाता बाँचे', 'पानी पर लकीर', 'रतनारे नयन', 'गहरी नदिया नाव पुरानी', 'गई झूलनी टूट' और 'वातभक्षा' में भी बिहार के किसी न किसी क्षेत्र की ही कहानी कहती है। इस तरह उषाकिरण खान के सभी उपन्यासों में बिहार और वहाँ क्षेत्र विशेष की ही कथा है।

आंचलिक उपन्यासों के पात्र, चित्रित स्थान विशेष से संबंधित होते हैं। इसलिए इस सीमा का अतिक्रमण आंचलिक उपन्यास को असफल बना सकता है। किन्तु उषाकिरण खान के उपन्यासों में आए सभी पात्र अपने अंचल विशेष से ही संबंध रखते हैं। ये पात्र अपने अंचल में रहकर ही अपने व्यक्तित्व का विकास करते हैं एवं वहीं रहकर जीवन में आए सभी संघर्षों से जूझते हुए जिजीविषा को कायम रखते हैं। इसका उदाहरण 'पानी पर लकीर' नामक उपन्यास की पात्र जलजा के माध्यम से देखा जा सकता है। जलजा वहाँ रहती है जहाँ बाढ़ निरंतर अपना ठिकाना ढूंढ़ती हुई चली आती है। जिस स्थान पर बाढ़ अपनी नज़र दौड़ाती है, उस स्थान को वह पूरी तरीके से खुद में समाहित कर लेती है; किन्तु यहाँ के निवासी कभी हार नहीं मानते, बाढ़ के जाते ही वे पुनः अपनी गृहस्थी बसाना शुरू कर देते हैं पर अपनी मातृ भूमि को छोड़कर नहीं जाते। उसी प्रकार जलजा जिसकी शादी बचपन में ही एक असहज लड़के से करा दी जाती है जिससे वो खुश नहीं रहती, पर उसका परिवेश उसे अपने-आपको तलाशने की एक जमीन देता है। जिसमें जलजा खुद को तलाशने की भरपूर कोशिश करती है और अंत में अपना एक मुकाम हासिल कर संतुष्टि से जीवन यापन करती है। 'पानी पर लकीर' का यह कथन जलजा और उसके परिवेश को चित्रित करने में सहायक होता है। उदा. – "जलजा का विवाह छोटी उम्र में असहज मूर्ख पति से कर दिया गया। जलजा ने उसे निभाया, काफी दिनों तक संबंध को घसीटा भी। उसके पिता की कभी यह मंशा नहीं थी कि बेटी दुःख काटे। जलजा लौटकर साक्षरता कार्यक्रम से जुड़ गयी, सिलाई, कटाई का काम करने लगी अपने आपको पहचानने को कोशिश करने लगी। एक ओर ससुराल से पिछड़ी मनोवृत्ति वाले लोगों ने बाधा पहुँचाने की चेष्टा की तो दूसरी ओर इलाके यानि भरना पर के पचपनिया समुदाय ने खुलकर साथ दिया। अपने परिश्रम के बल पर जलजा ने अपना मुकाम बनाया है। सेवाभावी संस्था की संयोजक है।"[6] 'फागुन के बाद' की जानकी, 'आशा : बारहखड़ी बिधाता बाँचे' की सादिया, सन्ध्या, 'पानी पर लकीर' की सोनी, 'रतनारे नयन' की ज्योति, रूपा, सीमांत कथा का वाणीधर, विधुभाल, 'हसीना मंजिल' की हसीना, सकीना, उसमान, 'वातभक्षा' की विथीका, निधि, 'गई झूलनी टूट' की कमलमुखी आदि सभी पात्र अपने क्षेत्र से ही संबंध रखते हैं, वे अपने जीवन संघर्ष को वहीं रहकर पूर्ण करते हैं और प्रगतिशीलता के साथ तादम्य भी स्थापित करते हैं।

क्षेत्र विशेष के वातावरण का चित्रण से तात्पर्य उपन्यास में चित्रित उस स्थल विशेष की भौगोलिक वातावरण, ऐतिहासिक परिस्थिति आदि के प्रति रचनाकार के ज्ञान से है। क्योंकि आंचलिक उपन्यासों में अंचल विशेष के सम्पूर्ण अंगों का वर्णन होता है। और रचनाकार पात्रों के जीवन एवं संघर्षों को उस अंचल के परिवेश के आधार पर ही दिखाता है। अगर उपन्यास की कथा उस स्थल के वातावरण के अनुरूप ना हो तो वह एक

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 8.789 Volume 14-Issue 02, (April-June 2026)

अस्वाभाविक एवं नाटकीय प्रतीत होगा। इसलिए एक रचनाकार के लिए उपन्यास की कथा के भौगोलिक वातावरण के प्रति ज्ञान रखना बेहद जरूरी बन जाता है। 'पानी पर लकीर' जैसा की नाम से ही दृष्टिपात होता है कि पानी का शहर जहाँ सदैव पानी अपनी सत्ता मनुष्यों पर थोपता है। इसलिए ऐसे स्थानों पर रहने वाले मनुष्य भी संघर्षशील और पुनर्जिजीविषा रखने वाले होते हैं। इसलिए इस उपन्यास के पात्र सोनी और जलजा के जीवन संघर्ष को वातावरण के अनुसार ही दिखाया गया है। उसी तरह 'फागुन के बाद' का ठाकुर गाँव कोसी नदी के पास बसा होता है इसलिए वहाँ बाढ़ हमेशा आता रहता है, जिससे वहाँ के युवक बंगाल और मोरंग जैसे स्थानों पर जाकर मज़दूरी करने को मज़बूर हो जाते हैं, मनीराम इसी का उदाहरण है। मनीराम के बंगाल जाकर मज़दूरी करने से कथा में विस्तार आता है। इसके साथ ही बाढ़ के कारण लोगों के विपन्न होने की कथा एवं बाढ़ से फैली महामारी का भी चित्रण इस उपन्यास में देखने को मिलता है। गाँव में आए बाढ़ के बाद की यथा स्थिति को इस प्रकार से चित्रित किया गया है- "एक धारा के सुख जाने से पूरा एक टोला, एक गाँव बरबाद हो जाता है। उसे अपने नित्यप्रति की आवश्यकता के लिए फिर कोई धारा चुननी पड़ती है। कुएं-तालाबों को ये नदियाँ साबुत रहने नहीं देतीं, चापाकल का जमाना ठीक से आया नहीं था। ऐसी संक्रमणकालीन स्थिति से गाँव गुजर रहा था। अलबत्ता ठाकुरगाँव इन सबमें आगे था।"[7] 'सीमांत कथा' उपन्यास में सिवान के आस-पास क्षेत्रों में व्याप्त राजनैतिक एवं वैचारिक वातावरण को चित्रित किया गया है।

उस स्थल विशेष के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक ज्ञान रखकर ही उस अंचल के लोक संस्कृति को वर्णित किया जा सकता है। डॉ. उषाकिरण खान बिहार के मिथिला में जन्मीं हैं इसलिए वहाँ की संस्कृति उनके हृदय में समाहित है। इसी कारण वो अपने उपन्यासों में बिहार और उसमें भी विशेषकर मिथिला क्षेत्र के रीति-रिवाज, खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा, पर्वोत्सव आदि को बेहद ही सटीकता के साथ चित्रित करती हैं। आज औद्योगिक तंत्रों का प्रयोग इतना बढ़ गया है कि हमारी हस्त कलाओं की संस्कृति नष्ट होने की कगार पर आ गई। इसी लोक संस्कृति की संरक्षण एवं विस्तार को उषाकिरण खान के 'हसीना मंजिल' उपन्यास में देखा जा सकता है। इस उपन्यास में चित्रित तिरहुत मिथिलाँचल का एक ऐसा स्थान है जहाँ शादी, गौना, बच्चे का छट्ठी पूजन, मुंडन, जनेऊ आदि सभी रस्में बिना लहठी के पूर्ण नहीं माने जाते थे इसलिए वहाँ इन खास दिनों में लहेरिनों के द्वारा बनाए गए लहठी की मांग रहती थी। तिरहुत के लहठियों में तिकोन वाली लहठियाँ सबसे अधिक लोकप्रियता रखती थी, जिसे सिर्फ सकीना के पिता उसमान बनाना जानते थे। सकीना अपने पिता उसमान से तिकोन वाली लहठियाँ बनाना सीखती है। एक दिन उसमान ने सकीना को मेले में अपनी दुकान लगाने की सलाह देता है, यह सलाह सकीना को भी अच्छा लगता है। मेले में आए पत्रकारों ने हसीना की हस्तकला का अनोखा रूप अखबारों में छाप दिया। रातों-रात सकीना की काठ के लहठियों की लोकप्रियता बढ़ जाती है और धीरे-धीरे देखते ही देखते सकीना उसमान की मदद से अपना एक अच्छा खासा लहठियों का व्यापार जमा लेती है। अब सकीना के पास बड़े-बड़े लोगों का ऑर्डर आने लगा था। कुछ दिनों बाद सकीना को सरकार के तरफ से एक चिट्ठी प्राप्त होती है जिसमें लोक कला के विशेष ज्ञान के लिए सकीना को मुख्यमंत्री द्वारा 15 अगस्त को पुरस्कृत किए जाने का उल्लेख था। सकीना और उसमान को इस बात पर विश्वास ही नहीं होता किन्तु सकीना का बेटा हसमत बहुत खुश होता है कि उसकी माँ को भारत सरकार द्वारा पुरस्कार दिया जाएगा। 16 अगस्त को भारत सरकार द्वारा सकीना को पुरस्कृत भी किया जाता है। "सकीना बानो को उनकी लोक कला (लाह की चूड़ी) के विशिष्ट ज्ञान के लिए कला अकादमी बिहार ने पुरस्कार के लिए चुना है। आगत स्वतंत्रता दिवस 15 अगस्त को माननीय मुख्यमंत्री के हाथों पदक एवं 25 हजार रुपयों की राशि गाँधी मैदान पटना में प्रदान किया जाएगा।"[8] इस तरह उषाकिरण खान ने तिरहुत की लुप्त होती लोक संस्कृति को सकीना के माध्यम से संरक्षित एवं विस्तृत करने का प्रयास किया है। 'रतनारे नयन' में मगध प्रांत के गंगा किनारे बसे लोगों के

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 8.789 Volume 14-Issue 02, (April-June 2026)

रिवाज को नन्हका की माँ के शब्दों में इस प्रकार चित्रण हुआ है- "बेटी हमारे इस नगर में रिवाज है गोद भरने पर लड़कोरी पियरी चढ़ाने गंगा मैया के घाट पर जाती है। सवा महीना बाबू के जनम का हो गया अब चल पियरी चढ़ा आयें।"[9] यहाँ लेखिका ने शुभ अवसर पर गंगा को पियरी चढ़ाने के रिवाज को चित्रित किया है। 'फागुन के बाद' उपन्यास में बिहार के स्त्रियों की वेश-भूषा को चित्रित किया गया है, जो उनके विशेषता को दिखाता है। उदा.- "छिंटदार नूरजहाँकट निमस्तीनवाला जम्पर पहने वे औरतें अलग ही पहचानी जाती थीं। बाकी औरतों ने नयी काट का चुन्नटदार ब्लाउज पहन रखा था। समस्तीपुरवाली औरतों के जम्पर में जेबें थीं, जिनमें वे रोसड़ा बाजार की खास बीड़ी का बंडल और दियासलाई की डिब्बी संभाल के रखतीं। गाँववाली औरतें हुक्का गुड़गुड़ातीं।"[10] अन्य लोक संस्कृतियों में गौने से आई बेटी को कढ़ी-बड़ी खिलाने का रिवाज, शादी के बाद पहला सावन नैहर में रहने का रिवाज, छठ पूजा की परंपरा, लोक में प्रचलित नाट्य, गीत आदि परंपराओं का भी चित्रण किया है गया है।

क्षेत्रीय परिवेश के कारण आंचलिक उपन्यासों में किसी स्थान विशेष की क्षेत्रीय बोली एवं भाषा का पुट मिलता है। इन भाषाओं का प्रयोग पात्रों की मनःस्थिति के अनुसार होता है जो उपन्यास की स्वाभाविकता में अभिवृद्धि प्रदान करता है। डॉ. उषाकिरण खान ने अपने उपन्यासों में बिहार प्रांत के अंचल को केंद्र बनाया है जिसके कारण उनके उपन्यासों की भाषा में बिहार की लोक बोलियाँ, स्थानीय भाषा और लोक में प्रचलित कहावतों, मुहावरों एवं लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया है, जो उनके स्थानीय भाषा के प्रति सजगता को प्रदर्शित करता है। लेखिका ने उपन्यासों में अशिक्षित पात्रो के लिए अंचल विशेष की बोली को अपनाया है तो वहीं शिक्षित पात्रों की भाषा में साहित्यिक खड़ी बोली का प्रयोग किया है। 'रतनारे नयन' का जंगीलाल की भाषा से बिहार की बोली-भाषा का पुट देखा जा सकता है। उदा. – "अरे का उतरें सिटवा पर से, अभी तुरत ड्यूटी पर से उतरे हैं, साहब के यहाँ मेम साहब की सखी-सहेली लोगों की पार्टी है। पान का औडर देने बोली हैं।"[11] 'रतनारे नयन' में बबलू की माँ का कथन बिहार क्षेत्र भी भाषा को दर्शाती है। उदा.– "बउरा का गये हैं जी, हम अलौंते परसौती को केकरा पर छोड़ के जायें? जच्चा-बच्चा कौन देखेगा?"[12] 'रतनारे नयन' में बबलू गोप, जंगीलाल, 'आशा : बारहखड़ी बिधाता बाँचे' का दास बाबू, 'गई झूलनी टूट' की घांटो, 'सीमांत कथा' का अकलू कुम्हार आदि पात्र बिहार की बोली बोलते हुए नज़र आते हैं।

समय परिवर्तनशील है और यह निरंतर खुद को समय के साथ-साथ परिष्कृत करती रहती है। आजादी के बाद गाँधी की ग्राम स्वराज और पंचायती राज की संकल्पना से गाँव रचनाओं के केंद्र में आया। आधुनिक चेतना के आने से गाँव में भी परिवर्तन होने शुरू हो गए थे। हम देखते हैं कि पूर्व में जो गाँव का स्वरूप था वह आज नहीं रहा है। भले ही नगरों की अपेक्षा यहाँ परिवर्तन ने धीरे-धीरे अपना कदम रखा किन्तु शिक्षा और स्वरोजगार के कारण वर्तमान समय के गाँव भी आधुनिक चेतना को वरण करने में पीछे नहीं रहे हैं। किन्तु गाँव अपनी संस्कृति की रक्षा करते हुए उसे युग सम्मत संस्कार कर आगे बढ़ाती है। इसलिए गाँव में आज भी हमारी पुरातन संस्कृति एवं सभ्यता जीवित है जो वर्तमान पीढ़ी एवं आने वाली पीढ़ी के लिए अति आवश्यक है। 'फागुन के बाद' जिस दलित स्त्री को पढ़ना अपसगुन माना जाता था वही 'कथा रजोखर' तक आते-आते परिवर्तन हो जाता है। सभी लोग अपने घर की बेटी और बहुओं को शिक्षित करना चाहते थे। आधुनिक चेतना के कारण ही जलजा, सोनी, सादिया, विथीका, सन्ध्या, सरिता, ज्योति, रूपा अपनी पढ़ाई पूरी कर खुद को आत्मनिर्भर बनाते हैं। आधुनिक चेतना के कारण ही 'रतनारे नयन' की ज्योति अपनी पसंद से शांतनु के साथ कोर्ट मैरेज करती है। 'आशा : बारहखड़ी बिधाता बाँचे' का जितन पंडित भी आधुनिक चेतना से प्रेरित होता है इसलिए नौकरी करने के बाद अपने आस-पास के क्षेत्रों के विकास में योगदान देता है। इस आधुनिक चेतना को लेखिका ने इस प्रकार से व्यक्त किया है- "वाह रे हमारा समय, अहा हमारा संविधान कि कुम्हार का बेटा मात्र माटी नहीं गूँधेगा, पुस्तक पढ़ेगा और नारी मात्र घर की दहलीज के

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 8.789 Volume 14-Issue 02, (April-June 2026)

अंदर नहीं रहेगी, लक्ष्मण रेखा पार करेगी पूरी इयता के साथ। उसे कोई रावण नहीं करेगा अधिक परेशान। अब उसे तृण की ओट नहीं चाहिए परपुरुष की ओर देखने के लिए, पर या स्वपुरुष वैसा ही जैसी कोई नारी।"[13] इसी प्रकार लेखिका ने 'वातभक्षा' उपन्यास में विवाह पूर्व माँ बनी स्त्री को समाज में उसी सम्मान के साथ स्थापित किया है, जो बदलते हुए परिवेश की ओर इशारा करता है। रम्या इंदु के शब्दों के माध्यम से इस संदर्भ को देखा जा सकता है- "सबों ने तुम्हें ठीक से पहचान लिया है विथीका। तुम्हें किसी ने कम करके न आँका। किसी ने तुम्हें दोष नहीं दिया है। तुम्हें एक सम्पूर्ण स्त्री के रूप में जाना है। तुम अपने आप को वृथा खाली समझती रही। नः, तुम तुम संज्ञा हो विथीका। यह तुम्हारी ओर देखता तुम्हारा परिवार ही समाज है।"[14]

निष्कर्ष

उषाकिरण खान के उपन्यासों का सम्यक् विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि उनकी रचनाधर्मिता आंचलिकता के सशक्त एवं जीवंत स्वरूप को अभिव्यक्त करती है। उनके साहित्य में लोक-जीवन के विविध आयाम रीति-रिवाज, पर्व-त्योहार, लोककलाएँ, क्षेत्रीय बोली-भाषा, प्राकृतिक परिवेश तथा जनसामान्य की जीवन-संघर्षशीलता अत्यंत स्वाभाविकता और प्रामाणिकता के साथ उभरते हैं। यह आंचलिकता मात्र सांस्कृतिक दस्तावेज़ीकरण तक सीमित नहीं रहती, बल्कि सामाजिक यथार्थ और मानवीय संवेदनाओं के गहन अंतर्संबंधों को भी उद्घाटित करती है। विशेषतः उल्लेखनीय यह है कि लेखिका परंपरा के संरक्षण के साथ-साथ बदलते समय की आधुनिक चेतना को भी अपने कथानकों में समाहित करती हैं। स्त्री-स्वातंत्र्य, शिक्षा, आत्मनिर्भरता तथा सामाजिक परिवर्तन जैसे समकालीन मूल्य उनके उपन्यासों में प्रभावी रूप से अभिव्यक्त होते हैं। इस प्रकार उनके साहित्य में परंपरा और आधुनिकता का एक संतुलित एवं समन्वित रूप दृष्टिगत होता है, जो न केवल आंचलिकता को नवीन संदर्भ प्रदान करता है, बल्कि उसे व्यापक सामाजिक विमर्श से भी जोड़ता है। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि उषाकिरण खान ने हिंदी के आंचलिक उपन्यासों की परंपरा को न केवल जीवित रखा है, अपितु उसे एक नवीन वैचारिक और कलात्मक विस्तार भी प्रदान किया है। उनकी आंचलिक दृष्टि संकीर्ण भौगोलिक सीमाओं से परे जाकर सार्वभौमिक मानवीय अनुभवों का प्रतिनिधित्व करती है, जिससे उनके उपन्यास क्षेत्रीय होते हुए भी वैश्विक संवेदनाओं के वाहक बन जाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. फणीश सिंह. *हिन्दी के आंचलिक उपन्यास एवं उपन्यासकार*. भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2013, पृ. 12
2. डॉ. आदर्श सक्सेना. *हिन्दी के आंचलिक उपन्यास और उनकी शिल्प-विधि*. सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 1971, पृ. 20
3. डॉ. सुरेश सिन्हा. *उपन्यास शिल्प और प्रवृत्तियाँ*. रामा प्रकाशन, लखनऊ, 1965, पृ. 225
4. डॉ. आदर्श सक्सेना. *हिन्दी के आंचलिक उपन्यास और उनकी शिल्प-विधि*. सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 1971, पृ. 25
5. उषाकिरण खान. *सीमांत कथा*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2000, पृ. 182
6. उषाकिरण खान. *पानी पर लकीर*. प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, 2011, पृ. 134-135
7. उषाकिरण खान. *फागुन के बाद*. दिल्ली, अनन्य प्रकाशन, 1995, पृ. 124
8. उषाकिरण खान. *हसीना मंजिल*. वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2012, पृ. 78
9. उषाकिरण खान. *रतनारे नयन*. अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 15
10. उषाकिरण खान. *फागुन के बाद*. दिल्ली, अनन्य प्रकाशन, 1995, पृ. 13

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 8.789 Volume 14-Issue 02, (April-June 2026)

11. उषाकिरण खान. *रतनारे नयन*. अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 21
12. उषाकिरण खान. *रतनारे नयन*. अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 148
13. उषाकिरण खान. *आशा: बारहखड़ी विधाता बाँचे*. नयी दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2023, पृ. 97
14. उषाकिरण खान. *वातभक्षा*. प्रयागराज, रुद्रादित्य प्रकाशन, 2021, पृ. 93